UGC NET ECONOMICS

SAMPLE THEORY

- मुद्रा की मांग
- सार्वजनिक राजस्व
- सहसम्बन्ध
- खेल सिद्धान्त

VPM CLASSES
For IIT-JAM, JNU, GATE, NET, NIMCET and Other Entrance Exams
1-C-8, Sheela Chowdhary Road, Talwandi, Kota (Raj.) Tel No. 0744-2429714
Web Site www.vpmclasses.com E-mail-vpmclasses@yahoo.com

मुद्रा की मांग

मुद्रा के दो महत्वपूर्ण कार्यों के कारण मुद्रा की मांग उत्पन्न होती है। प्रथम यह है कि मुद्रा विनिमय के माध्यम का कार्य करती है और दूसरा यह कि मुद्रा मूल्य का संचय (store of value) है। अतः व्यक्ति और व्यापारी मुद्रा को आंशिक रूप से नकदी के रूप में और आंशिक रूप से परिसम्पतियों के रूप में रखना चाहते हैं।

मुद्रा की मांग के निम्न मत हैं – क्लासीकल, नव क्लासीकल (neo classical), केन्जीय तथा केन्जोपरान्त (Post Keynesian) । इन मतों की निम्नलिखित विवेचना की गई है।

क्लासीकल मत (Classical Approach)

क्लासीकल अर्थशास्त्रियों ने मुद्रा के संचयन वेग (velocity of circulation) के रूप में मुद्रा की लेन–देन मांग पर बल दिया । इसका कारण यह है कि क्लासीकल विचार धारा के अनुसार मुद्रा विनिमय के माध्यम का कार्य करती है और वस्तुओं तथा सेवाओं के विनिमय को सुगम बनाती है। फिशर के **'विनिमय के समीकरण'** में MV = PT

जहां M मुद्रा की कुल मात्रा, V मुद्रा का संचयन वेग, P कीमत स्तर तथा T मुद्रा में विनियम की गयी कुल वस्तुओं और सेवाओं की मात्रा है।

इस समीकरण में PT मुद्रा की मांग को व्यक्त करता है

MV मुद्रा की पूर्ति को व्यक्त करता है और संतुलन स्तर पर मुद्रा की मांग के बराबर होती है। इस प्रकार मुद्रा की मांग का समीकरण होगा–

$$M_d = PT$$

जहां M_d मुद्रा की मांग है ।

नव–क्लासीकल सिद्वान्त (Neo-Classical Theory)

मुद्रा के मांग के नव–क्लासीकल सिद्वान्त को कैम्ब्रिज अर्थशास्त्री मार्शल और पीगू ने दिया था । कैम्ब्रिज मत के अनुसार मुद्रा की मांग का समीकरण है–

$$M_d=KPY$$

जहां M_d मुद्रा की मांग K वास्तविक मौद्रिक आय का भाग है जिसे लोग नकदी के रूप में रखना चाहते हैं, P कीमत स्तर है । **यह समीकरण बताता है कि अन्य बातें समान रहने पर सामान्य रूप में मुद्रा की मांग प्रत्येक व्यक्ति के नकदी आय स्तर के समानुपातिक होगी।**

कैम्ब्रिज मांग फलन को निम्न रेखाचित्र की सहायता से दिखाया जा सकता है।

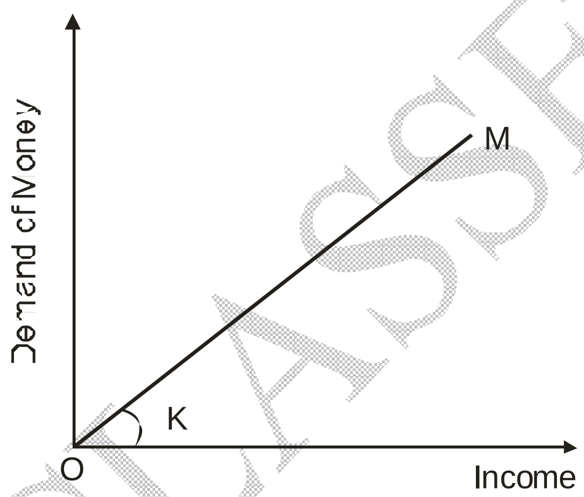

रेखाचित्र : Cambridge Demand for Money Function.

क्लासीकल अर्थशास्त्रियों ने केवल मुद्रा के विनियम के माध्यम कार्य के ऊपर ही बल दिया है। उनके अनुसार अर्थब्यवस्था में मुद्रा निष्प्रभावी भूमिका निभाती है । यह एक गलत धारणा है क्योंकि मुद्रा परिसम्पति का कार्य भी करती है जब यह बिलों, बांडों, प्रतिभूतियों, ऋणपत्रों, वास्तविक परिसम्पत्तियों जैसे मकान, जमीन आदि अन्य प्रकार की परिसम्पत्तियों में परिवर्तित कर दी जाती है। अतः मुद्रा की मांग के क्लासीकल सिद्धान्त की मुख्य कमी मुद्रा के परिसम्पत्ति कार्य की उपेक्षा थी जिसे केन्ज ने दूर किया।

मुद्रा की मांग का केन्जीय सिद्वान्त

केन्ज के अपनी पुस्तक General Theory में मुद्रा की मांग के लिए एक नया शब्द **'तरलता अधिमान'** का प्रयोग किया है। केन्ज के अनुसार अर्थव्यवस्था में मुद्रा की मांग तीन उद्देश्यों के कारण होती है–

1. लेन–देन उद्देश्य

2. सतर्कता उद्देश्य

3. सट्टा उद्देश्य

केन्ज के अनुसार मुद्रा की मांग इन्हीं तीन उद्देश्यों के कारण होती है। इन्हीं तीनों उद्देश्यों के कारण हुई मुद्रा की मांग को मुद्रा की कुल मांग (Aggregate demand for money) कहते हैं। स्मरण रहे, केन्ज के 'मुद्रा की मांग' से अभीप्राय मुद्रा की उस राशि से है जो लोग अपने पास रखते हैं (The demand for money in the Keynesian sense is the demand to hold money) ।

1. **लेन–देन उद्देश्य** – यह रोजाना के लेन–देन के लिए मुद्रा की मांग से सम्बन्धित है। इस प्रकार लेन–देन उद्देश्य के लिए मुद्रा की मांग मुद्रा के विनिमय के माध्यम कार्य से उत्पन्न होती है।

केन्ज के अनुसार, अन्य तत्वों के दिए होने पर मुद्रा की लेन–देन उद्देश्य से सम्बन्धित मांग आय स्तर का प्रत्यक्ष समानुपातिक और धनात्मक फलन है। इसे इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है –

$$L_t = kY$$

जहां L_t मुद्रा की लेन–देन मांग, k आय का वह भाग जो लेन–देन उद्देश्य के लिए रखा जाता है, और Y आय है।

इस समीकरण को निम्न रेखाचित्र की सहायता से दर्शाया गया है। जहां kY रेखा मुद्रा की लेन–देन मांग और आय स्तर में रेखीय (linear) और सामानुपातिक सम्बन्ध व्यक्त करती है।

यहां ध्यान देने योग्य बात यह है कि केन्ज ने मुद्रा की लेन–देन मांग को ब्याज बेलोच माना है।

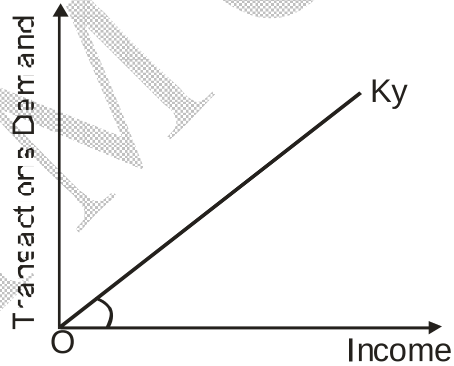

रेखचित्र : मुद्रा की लेन–देन मांग

2. **सतर्कता उद्देश्य** – व्यक्ति तथा व्याक्सायिक फर्में आपात स्थिति का सामना करने के लिए भी कुछ अतिरिक्त राशि नकदी के रूप में रखते है। इसे ही सतर्कता उद्देश्य के लिए मुद्रा की मांग कहते है।

अप्रत्याशित आवश्यकताओं को पुरा करने के लिए व्यक्ति और व्यापारी दोनों ही कुछ नकदी रिजर्व में रखते हैं। व्यक्ति तो बीमारी, दुर्घटना, बेरोजगारी और अपूर्वदृष्ट संभाव्यताओं (unforeseen contingencies) की व्यवस्था करने के लिए कुछ नकदी रिजर्व रखता है। इसी प्रकार, व्यापारी प्रतिकूल स्थितियों को पार करने के लिए या अप्रत्याशित सौदों से लाभ उठाने के लिए कुछ नकदी रिजर्व रखता है। इन्ही सभी उद्देश्यों के लिए रखी गई मुद्रा की मांग को सतर्कता मांग कहते हैं।

केन्ज के अनुसार मुद्रा की लेन –देन मांग की तरह, सतर्कता मांग भी आय स्तर का फलन होती है।

3. **सट्टा उद्देश्य** – केन्ज के अनुसार मुद्रा की सट्टा मांग इस उद्देश्य के लिए होती है "कि भविष्य के सम्बन्ध में मार्किट की तुलना में अधिक जानकारी द्वारा लाभ कमाए जा सकें। सट्टा उद्देश्य के लिए रखी गई मुद्रा मूल्य का एक तरल संचय है जो उपयुक्त अवसर पर बाडों या प्रतिभूतियों में निवेश की जा सकती है।"

केन्ज के अनुसार मुद्रा की सट्टा मांग ब्याज दर का घटता हुआ फलन है। ब्याज की दर जितनी ऊंची होगी, मुद्रा की सट्टा मांग उतनी ही कम होगी तथा ब्याज दर जितनी कम होगी मुद्रा की सट्टा मांग उतनी ही अधिक होगी। इसको इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है –

$$L_s = f(r)$$

जहां L_s मुद्रा की सट्टा मांग है और r ब्याज की दर है। रेखाचित्र की सहायता से मुद्रा की सट्टा मांग को ऊपर दर्शाया गया है।

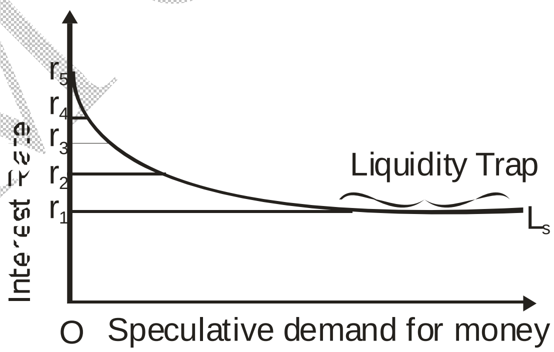

रेखाचित्र : मुद्रा की सट्टा मांग

उपरोक्त रेखाचित्र से स्पष्ट है कि ब्याज की बहुत ऊंची दर r_5 पर मुद्रा की सट्टा मांग शून्य है क्योंकि व्यापारी अपने समस्त नकदी को बांडों में निवेश कर देते हैं क्योंकि उन्हें विश्वास होता है कि ब्याज दर

में और वृद्धि नहीं हो सकती परिणामस्वरूप बांडों की कीमत अब और नहीं घटेगी बल्कि अब बढ़ेगी ही। जैसे–जैसे ब्याज की दर घटेगी मुद्रा की सट्टा मांग बढ़ेगी । अतः L_s वक्र का आकार यह दिखाता है कि जब ब्याज दर बढ़ती है तो मुद्रा की सट्टा मांग गिरती है तथा ब्याज में कमी से यह बढ़ती है।

तरलता जाल (Liquidity trap) – बहुत नीची ब्याज दर जैसे कि उपरोक्त रेखाचित्र में r_1 पर L_s वक्र पूर्णतया लोचदार (Perfectly elastic) बन जाता है, और मुद्रा की सट्टा मांग अनन्त लोच होती है । L_s वक्र का यह भाग **'तरलता जाल'** कहलाता है। इतनी नीची ब्याज दर पर लोग बांडों में निवेश करने के बजाय मुद्रा को नकदी में रखने को अधिमान (Preference) देते है, क्योंकि बांडों को खरीदने का मतलब होगा निश्चित हानि। लोग उस समय तक बांड नहीं खरीदेंगे जब तक ब्याज दर इस निम्न स्तर पर रहती है। केन्ज के अनुसार जब ब्याज दर शून्य के निकट आती है तो बांड रखने में हानि का जोखिम बढ़ जाता है। अतः ब्याज दर जितनी ही कम होगी नकदी रखने की मांग उतनी ही अधिक होगी । परिणामस्वरूप, L_s वक्र पूर्णतया लोचदार बन जाएगा।

केन्ज के अनुसार, मुद्रा की कुल मांग, लेन–देन तथा सतर्कता उद्देश्यों के लिए मुद्रा की मांग का योग होती है। चूंकि लेन–देन और सतर्कता उद्देश्यों के लिए रखी गई मुद्रा मुख्यतया आय का फलन होता है और सट्टा मांग ब्याज दर का फलन है। इस प्रकार मुद्रा की कुल मांग आय और ब्याज दर दोनों का फलन होता है–

$$L = L_t + L_s$$
$$= f(Y) + f(r)$$
$$= f(Y, r)$$

जहां L मुद्रा की कुल मांग को व्यक्त करता है।

मुद्रा की कुल मांग वक्र लेन–देन और सतर्कता उद्देश्यों के मांग फलन तथा सट्टा उद्देश्य के लिए मांग फलन के पार्श्व योग (lateral summation) द्वारा खींचा जा सकता है। जिसे रेखाचित्र में दिखाया गया है।

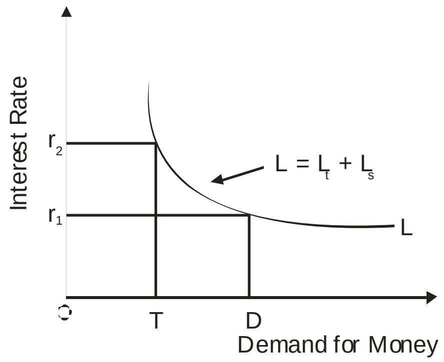

रेखाचित्र : मुद्रा की मांग (केन्ज के अनुसार)

उपरोक्त रेखाचित्र में L मुद्रा की कुल मांग वक्र है। जब ब्याज दर Or_1 होता है तो कुल मांग OD है। जिसमें तीनों उद्देश्यों के लिए मुद्रा की मांग शामिल है।

केन्जोपरान्त मत (Post Keynesian Approach)

मुद्रा की मांग के केन्जोपरान्त सिद्धान्त के अन्तर्गत बोमल (Boumol), टोबिन (Tobin) तथा फ्रीडमैन (Friedman) के विचारों को शामिल किया जाता है। प्रो. बोमल अपने विचारों में मुद्रा की लेन–देन मांग को ब्याज लोच (interest elastic) बतलाया। प्रो. टोबिन तरलता अधिमान (liquidity preference) को जोखिम के प्रति व्यवहार मानता है। जबकि फ्रीडमैन के अनुसार मुद्रा की मांग केवल आय तथा ब्याज की दर का नहीं, बल्कि कुल सम्पति का भी फलन होता है।

बोमल का स्टॉक सैद्धान्तिक मत (Baumol's Inventory Theoretic Approach)

चूंकि केन्ज मुद्रा की लेन–देन मांग को आय के स्तर का फलन मानता है और लेन–देन मांग तथा आय के बीच रेखीय एवं समानुपाती, सम्बन्ध मानता है। लेकिन बोमल के अनुसार मुद्रा की लेन–देन मांग तथा आय में सम्बन्ध न तो रेखीय है और न ही समानुपातीक, बल्कि होता यह है कि जब आय में परिवर्तन होते हैं तो मुद्रा की लेन–देन मांग में आनुपातिक से कम परिवर्तन होते है। फिर केन्ज यह भी मानता था कि लेन–देन मांग मुख्य रूप से ब्याज बेलोच होती है । परन्तु बोमल ने मुद्रा की लेन–देन मांग को ब्याज लोच माना है। बोमल ने अपने सिद्धान्त में इस बात पर बल दिया है कि मुद्रा की मांग **वास्तविक शेषों** (real balances) के लिए मांग होती है बोमल के लेन–देनों के लिए वास्तविक शेषों (मुद्रा की मांग) की मांग को इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है –

$$M_d = \frac{1}{2}\sqrt{\frac{2hY}{r}} \times P$$

जहां M_d मुद्रा की लेन–देन मांग, P कीमत स्तर, r ब्याज दर, h गैर ब्याज लागतें तथा Y आय स्तर हैं।

उपरोक्त समीकरण से स्पष्ट है कि कीमत स्तर में परिवर्तनों और मुद्रा की लेन–देन मांग के बीच प्रत्यक्ष एवं समानुपातिक सम्बन्ध होता है। इस प्रकार बोमल द्वारा प्रस्तुत वास्तविक शेषों की मांग के विश्लेषण का मतलब है कि लेन–देने के लिए मुद्रा की मांग में भ्रांति (money illusion) नहीं है।

टोबिन का निवेश सूची चयन मॉडल : जोखिम निवारण तरलता अधिमान सिद्धान्त (Tobin's Portfolio Selection Model : The Risk Aversion theory of liquidity Preference)

जेम्स टोबिन ने अपने "Liquidity Preference as Behaviour Towards Risk" शीर्षक प्रसिद्ध लेख में निवेश सूची चयन पर आधारित जोखिम निवारण तरलता अधिमान सिद्धान्त (risk aversion theory of liquidity preference) प्रस्तुत किया ।

इस सिद्धान्त में उसने तरलता अधिमान (liquidity preference) के केन्जीयन सिद्धान्त के दो प्रमुख दोषों को दूर किया है। एक, केन्ज का तरलता अधिमान भावी ब्याज दरों की प्रत्याशाओं की बेलोच (inelasticity) पर निर्भर करता है। दूसरा, व्यक्ति या तो मुद्रा रखता है या फिर बांड (Bond) ही। टोबीन ने अपने सिद्धान्त में इन दोनों दोषों को दूर कर दिया है। उसका सिद्धान्त भावी ब्याज दरों की प्रत्याशाओं की बेलाच पर निर्भर नहीं करता है बल्कि यह मान्यता लेकर चलता है कि परिसम्पत्तियां (interest bearing assets) रखने से पूंजी लाभ अथवा हानि का प्रत्याशित मूल्य (expected value) हमेशा शून्य होता है। फिर यह इस बात को भी स्पष्ट करता है कि किसी व्यक्ति की निवेश सूची में मुद्रा तथा बांड (bond) दोनों ही रहते हैं, यह नहीं कि एक समय में कोई एक ही रहे।

फ्रीडमैन का सिद्धान्त

फ्रीडमैन द्वारा प्रतिपादित मुद्रा के मांग सिद्धान्त को मुद्रा का आधुनिक सिद्धान्त (Modern Theory of Money) भी कहा जाता है। फ्रीडमैन के अनुसार मुद्रा की मांग तीन कारकों पर निर्भर करती है – (a)

विभिन्न प्रकार की परिसम्पत्तियों के रूप में रखी गई कुल सम्पत्ति (b) विभिन्न प्रकार की सम्पत्ति की सम्बन्धित कीमतें या उनके सापेक्षिक प्रतिफल (c) सम्पत्तियों के स्वामियों की रूचियां एवं अधिमान । फ्रीडमैन ने मुद्रा की मांग या मुद्रा शेषों की मांग को निर्धारित करने वाले दो कारकों पर बल दिया है । वे हैं : (i) विभिन्न प्रकार की वैकल्पिक परिसम्पत्तियों जैसे बांड व शेयरों पर ब्याज की दर (ii) कीमत स्तरों में परिवर्तन की प्रत्याशित दर। वास्तव में ये दोनों ही कारक मुद्रा शेषों की रखने की लागत को प्रभावित करते है। फ्रीडमैन यह मानता है कि वास्तविक आय मुद्रा की मांग का प्रमुख निर्धारक है।

दीर्घकाल में मुद्रा की मांग की लोच इकाई (unity) से अधिक हाती है।

फ्रीडमैन ने मुद्रा के मांग फलन को निम्न प्रकार से व्यक्त किया है –

$$M = f\left(Y, P, \frac{1}{P}\cdot\frac{dp}{dt}, r_b, r_e, w, u\right)$$

जहां M = मांगी गई मुद्रा का कुल स्टॅाक

P = कीमत स्तर

$\left(\frac{1}{P}\cdot\frac{dp}{dt}\right)$ = वस्तुओं की कीमतों में होने वाले परिवर्तन की प्रत्याशित दर

w = मानवीय सम्पत्ति से गैर मानवीय सम्पत्ति का अनुपात

u = रूचियां, अधिमानों तथा अन्य सम्बद्ध चर

r_b = बांडों पर प्रतिफल

r_e = इक्विटी पर प्रतिफल

इस मांग फलन से यह निष्कर्ष निकलता है कि विभिन्न परिसम्पत्तियों की प्रत्याशित लाभ में वृद्वि होने से सम्पत्ति धारक की मुद्रा की मांग राशि घट जाती है और सम्पत्ति में वृद्वि मुद्रा की मांग को बढ़ा देती है।

पेटिनकिन द्वारा किया गया मुद्रा तथा मूल्य सिद्धान्त का एकीकरण : वास्तविक शेष प्रभाव (Patinkin's integration of monetary and value theory : The Real Balance Effect)

पेटिनकिन ने नव क्लासीकल अर्थशास्त्रियों की इस बात को लेकर आलोचना की है कि उन्होंने वस्तु बाजार का द्वि–विभाजन कर दिया है। द्वि–विभाजन (dichotomization) का अर्थ है कि सापेक्ष कीमत स्तर (relative price) को वस्तुओं की मांग तथा पूर्ति निर्धारित करती है और निरपेक्ष कीमत स्तर को

मुद्रा की मांग तथा पूर्ति निर्धारित करती है। नव क्लासीकल सिद्धान्त की द्वि–विभाजन की मान्यता का खण्डन करते हुए पेटिनकिन ने अर्थव्यवस्था के मुद्रा बाजार तथा वस्तु बाजार का एकीकरण किया है। उसने वास्तविक शेष प्रभाव (real balance effect) के माध्यम से दोनों बाजारों का समाधान किया है।

वास्तविक शेषों का अर्थ है– लोगों के नकदी धारणों के स्टॉक की वास्तविक क्रय शक्ति।

जब कीमत स्तर बदलता है तो वह लोगों के नकदी धारणों की क्रय शक्ति को प्रभावित करता है जो कि आगे वस्तुओं की मांग और पूर्ति को प्रभावित करती है। यही वास्तविक शेष प्रभाव है। पेटिनकिन इस प्रभाव के माध्यम से द्वि–विभाजन को नकारता है। इसके लिए पेटिनकिन किसी समुदाय द्वारा धारित वास्तविक शेषों के स्टॉक (M/P) को उसकी वस्तुओं के लिए मांग पर प्रभाव के रूप में प्रस्तुत करता है। इस प्रकार किसी वस्तु के लिए मांग, वास्तविक शेष तथा सापेक्ष कीमतों पर निर्भर करता है। अब यदि कीमत स्तर बढ़ेगा तो इससे लोगों का वास्तविक शेष (क्रय शक्ति) कम हो जाएगा और वे पहले से कम खर्च करेंगे। इसका मतलब है कि वस्तुओं की मांग कम हो जाएगी और परिणामतः कीमत स्तर गिर जाएगा। इसके विपरीत कीमत स्तर गिरने से वास्तविक शेष बढ़ जाएंगे जिसके परिणामस्वरूप वस्तुओं की कीमतें एवं कीमत स्तर बढ़ेंगें। पेटिनकिन के शब्दों में यही महत्वपूर्ण बात है निरपेक्ष कीमत स्तर का अपने सन्तुलन मूल्य की ओर प्रावैगिक समूहन वास्तविक शेष प्रभाव के माध्यम से– वस्तु बाजारों को और निष्कर्षतः सापेक्ष कीमतों को प्रभावित करेगा। इस प्रकार निरपेक्ष कीमतें न केवल मुद्रा बाजार में बल्कि अर्थव्यवस्था के वास्तविक क्षेत्र में भी महत्त्वपूर्ण कार्य करती हैं।

कर भार विभाजन के विभिन्न उपागम (Different approaches to the division of tax burden)

प्रत्येक कर व्यक्तियों पर एक भार होता है क्योंकि करों से व्यक्तियों की आय कम हो जाती है तथा उपभोग घट जाता है। अतः यह आवश्यक है कि सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक दृष्टिकोणों से कर भार का न्यायपूर्ण वितरण हो।

कर भार के वितरण में न्याय के आदर्श को प्राप्त करने के लिए समय–समय पर अर्थशास्त्रियों ने अनेक सिद्धांतों के प्रतिपादन किया है जिनमें निम्न सिद्धांत प्रमुख हैं –

1. **वित्तीय सिद्धांत (Financial Theory) :** यह सिद्धांत कॉलबर्ट (Colbert) के इस कथन से संबंधित है कि " बत्तख के पर इस प्रकार से निकाले जाएं कि वह कम से कम शोर मचाए" अर्थात इस सिद्धांत का उद्देश्य अधिकाधिक आय प्राप्त करना है तथा कर इस प्रकार से लगाए जाएं कि जनता उनका कम

से कम विरोध करे। यह सिद्धांत अव्यवहारिक तथा अनुचित है। क्योंकि इस सिद्धांत के अनुसार कर भार उन व्यक्तियों को वहन करना पड़ेगा जिनमें विरोध करने एवं चिल्लाने की शक्ति नहीं है।

2. **समता का सिद्धांत (Principle of Equity):** आधुनिक अर्थशास्त्रियों ने कराधान भार के वितरण के मामले में न्याय पर भारी जोर दिया है और समता एवं न्याय के सिद्धांत को अपनाने की वकालत की है। समता के दो पहलू अंतर्निहित हैं – समान तथा असमान परिस्थितियों में लोगों से पृथक्–पृथक् व्यवहार किया जाए। समान परिस्थितियों (kide circumstances) का अभिप्राय यह है कि जो लोग आर्थिक दृष्टिकोण से समान रूप से समृद्व हैं तथा समान परिस्थितियों में जीवन व्यतीत कर रहे हैं उन्हें समान मात्रा में ही कर अदा करना चाहिए। इसे समतल न्याय (horizontal equity) भी कहा जाता है। असमान परिस्थितियों (unlike circumstances) से आशय है कि असमान परिस्थितियों में रहने वाले लोगों से असमान अथवा तद्नुसार ही व्यवहार किया जाए अर्थात समृद्व अथवा अच्छी हालत वाले व्यक्ति अन्य लोगों के मुकाबले अधिक कर अदा करें। इसे असमतल न्याय (Vertical equity) कहा जाता है।

3. **सेवा की लागत का सिद्धांत (Cost of Service Theory):** इस सिद्धांत के अनुसार, सरकार व्यक्तिगत करदाताओं के लाभ के लिए जो विभिन्न सेवाएं संपन्न करती है उनकी लागत को ही कराधान का आधार बनाया जाना चाहिए। प्रत्येक करदाता से उस लागत (cost) के बराबर कर लिया जाना चाहिए जो कि उसको प्रदान की जाने वाली सेवा पर लगी हो। इसका अर्थ यह है कि जितनी अधिक लागत होगी, कर की दर भी उतनी ही अधिक ऊंची होगी और इसके विपरीत लागत यदि कम होगी तो कर की दर भी कम हागी।

4. **लाभ सिद्धांत (Benefit Theory) :** इस सिद्धांत के अनुसार लोगों में कराधान के भार को उन लाभों के अनुपात में बांटा जाना चाहिए जो कि वे राज्य से प्राप्त करते हैं। इसके अनुसार जो लोग राज्य से समान लाभ प्राप्त करते हैं उन्हें कर भी एक समान ही अदा करना चाहिए और जो लोग अधिक लाभ प्राप्त करते हैं उन्हें कम लाभ प्राप्त करने वाले लोगों के मुकाबले अधिक कर अदा करना चाहिए।

5. **भुगतान सामर्थ्य का सिद्धांत (Ability to Pay Theory)** : यह एक सर्वस्वीकृति सिद्धांत है। इस सिद्धांत के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को अपनी भुगतान करने की सामर्थ्य के अनुपात में राज्य को अपना अंशदान देना चाहिए। इस प्रकार धनी व्यक्ति की करदान योग्यता अधिक होने उसे अधिक मात्रा में तथा निर्धन की करदान योग्यता कम होने से कम मात्रा में अंश दान देना चाहिए।

भुगतान सामर्थ्य के सिद्धांत के अंतर्गत एक मौलिक समस्या यह उत्पन्न होती है कि व्यक्ति की कर अदा करने की सामर्थ्य को कैसे मापा जाए? इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए दो दृष्टिकोणों का सहारा लिया जाता है –

(a) व्यक्तिपरक दृष्टिकोण (Subjective approach)

(b) वस्तुपरक दृष्टिकोण (objective approach)

व्यक्तिपरक दृष्टिकोण के अंतर्गत, करदान सामर्थ्य को मापने के लिए त्याग सिद्धांत (sacrifice theory) का उपयोग किया जाता है और वस्तुपरक दृष्टिकोण में, इस कार्य के लिए उत्पादक शक्ति सिद्धांत (faculty theory) आय, संपत्ति का उपयोग किया जाता है।

(a) व्यक्तिपरक दृष्टिकोण (Subjective approach)

व्यक्तिपरक दृष्टिकोण करदाताओं की मनोवैज्ञानिक अथवा मानसिक प्रतिक्रियाओं पर आधारित है। इस दृष्टिकोण की मान्यता है कि करदाता को करों के अदा करने में मानसिक असंतोष, कष्ट तथा अन्य प्रकार की असुविधाएं होती है। इस प्रकार करदाता जब कर का भुगतान करता है तो उसे त्याग करना पड़ता है। यदि करभार को न्यायपूर्ण रीति से बांटा जाए तो प्रत्येक करदाता को समान त्याग ही करना होगा।

व्यक्तिपरक दृष्टिकोण से करारोपण के तीन आधार लिए जाते हैं –

(a) समान निरपेक्ष त्याग (Equal Absolute Sacrifice)

(b) समान आनुपातिक त्याग (Equal Proportional Sacrifice)

(c) समसीमान्त त्याग अथवा न्यूनतम कुल त्याग (Equal Marginal Sacrifice)

समान निरपेक्ष त्याग (Equal Absolute Sacrifice)

इस सिद्धांत के अनुसार करदाताओं पर करभार का वितरण इस प्रकार से किया जाना चाहिए कि सब कर दाताओं पर प्रत्यक्ष वास्तविक भार बराबर हो।

समान अनुपाती त्याग (Equal Proportional Sacrifice)

इस सिद्धांत के अनुसार करदाताओं पर कर का भार समान नहीं रहता है बल्कि उनकी आर्थिक स्थितियों के अनुपात में निश्चित होता है। अन्य शब्दों में, इस सिद्धांत के अनुसार कर लगाने के परिणामस्वरूप होने वाली उपयोगीता की हानि करदाताओं की कुल आय के अनुपात में होनी चाहिए।

इस स्थिति में अधिक आय वाले करदाता निम्न आय वाले करदाताओं के मुकाबले अधिक कर अदा करेंगे।

समान सीमान्त त्याग (Equal Marginal Sacrifice)

इस सिद्धांत के अनुसार विभिन्न करदाताओं का कुल त्याग नहीं बल्कि सीमान्त त्याग (अर्थात करदाता के आय की अन्तिम इकाई द्वारा कराया जाने वाला त्याग) बराबर होना चाहिए ताकि समुदाय का समस्त त्याग सम्पूर्ण रूप से न्यूनतम हो।

इस सिद्धांत के अनुसार कर का निर्धारण इस प्रकार किया जाना चाहिए कि करदाताओं द्वारा किए गए त्याग की मात्रा कम से कम हो तथा सामाजिक लाभ अधिकतम हो। यह तभी संभव है जब सभी करदाताओं का सीमान्त त्याग बराबर हो। समान सीमान्त त्याग का सिद्धांत अत्यधिक आरोही (Progressive) कर ढांचे का निर्माण करता है।

(b) वस्तुपरक दृष्टिकोण (Objective Approach)

त्याग सिद्धांत अथवा व्यक्तिपरक दृष्टिकोण के विपरीत वस्तुपरक सिद्धांत करदाता की भावनाओं एवं उसके कष्टों की अपेक्षा उसकी करदेय क्षमता (taxable capacity) के द्राव्यिक मूल्य (money value) को दृष्टिगत रखता है। इस प्रकार त्याग सिद्धांत की तरह वस्तुपरक दृष्टिकोण करदाता की मनोवैज्ञानिक भावनाओं पर आधारित नहीं है बल्कि उसकी करदेय क्षमता पर आधारित है जो कि उसकी आय, संचित धन तथा सम्पत्ति आदि के द्वारा मापी जाता है वस्तुपरक दृष्टिकोण के अंतर्गत व्यक्ति की कर अदा करने की सामर्थ्य को मापने के तीन महत्त्वपूर्ण मापदंड हैं –

(a) करदाता की आय

(b) करदाता की सम्पत्ति

(c) करदाता का उपभोग स्तर या व्यय

करों को उनके स्वरूप, प्रकृति तथा उनको लगाने की विधि के आधार पर कई वर्गों में बांटा जा सकता है।

1. प्रत्यक्ष एवं परोक्ष कर (Direct and Indirect Taxess)

2. विशिष्ट तथा मूल्यनुसार कर (Specific and Advalorem Duties)

3. आरोही (Progressive), अनुपाती (Proportional), अवरोही (Regressive) कर।

प्रत्यक्ष तथा परोक्ष कर (Direct and Indirect Taxes)

प्रत्यक्ष कर वह भुगतान है जिसमें कराधान एवं करभार एक ही व्यक्ति पर पड़ता है। इसके विपरीत यदि कराधान (Impact) और करभार (Incidence) अलग–अलग व्यक्तियों पर पड़ता है तो वह परोक्ष कर (indirect taxes) कहलाता है। इस प्रकार परोक्ष कर तो वह होता है जिसका अन्तरण (shifting) किया जा सकता है अथवा जिसे किसी अन्य व्यक्ति पर टाला जा सकता हैं, और प्रत्यक्ष कर वह होता हैं जिसका अन्तरण नहीं किया जा सकता अथवा जिसकी अदायगी को अन्य किसी व्यक्ति पर टाला नहीं जा सकता।

आय कर, सम्पत्ति कर, निगम कर आदि प्रत्यक्ष कर की श्रेणी में आते हैं जबकि सीमा शुल्क, उत्पादन शुल्क, बिक्री कर आदि अप्रत्यक्ष कर की श्रेणी में आते हैं।

मूल्यानुसार कर तथा विशिष्ट कर (Ad-valorem and specific Duties) : मूल्यानुसार कर वह कर है जो कि वस्तु के मूल्य के रूप में व्यक्त किया जाता है जबकि विशिष्ट कर उन करों को कहते हैं जो कि वस्तु की इकाई एवं मात्रा के आधार पर अदा की गई एक निश्चित रकम के रूप में व्यक्त किए जाते हैं।

आरोही (प्रगतिशील), अनुपाती तथा अवरोही कर (Progressive Proportional and Regressive Taxes): कर पद्वति की रचना विभिन्न प्रकार के करों को मिलाकर की जाती है जिनमें से कुछ कर आरोही हो सकते हैं तथा कुछ अनुपाती, जबकि कुछ अवरोही। भारतीय कर–पद्वति का निर्माण यद्यपि आरोही तथा अनुपाती दोनों ही प्रकारों को मिलाकर किया गया है तथापि उसकी प्रकृति, सम्पूर्ण रूप में, आरोही ही कही जा सकती है।

अनुपाती, अरोही तथा अवरोही करों की दरें आगे दिए गए अनुसूचियों की सहायता से समझाई गई है।

अनुपाती कर की दरें (Proportional Tax Rates)

आय स्तर	कर की दर	कर की राशि
10,000 रू.	10 प्रतिशत	1,000 रू.
20,000 रू.	10 प्रतिशत	2,000 रू.
30,000 रू.	10 प्रतिशत	3,000 रू.
40,000 रू.	10 प्रतिशत	4,000 रू.

इस प्रकार स्पष्ट है कि अनुपाती करों के अंतर्गत आय के बढ़ने के साथ–साथ करदाता द्वारा अदा किए जाने वाली कर की कुल राशि बढ़ती हैं।

प्रगतिशील कर की दरें (Progressive Tax Rates)

आय स्तर	कर की दर	कर की राशि
10,000 रू.	10 प्रतिशत	1,000 रू.
20,000 रू.	15 प्रतिशत	3,000 रू.
30,000 रू.	25 प्रतिशत	7,500 रू.
40,000 रू.	40 प्रतिशत	16,000 रू.

स्पष्ट है कि आरोही करों के अंतर्गत आय में वृद्वि होने पर करों की दरों में भी तेजी से वृद्वि होती है। साथ ही, करों के रूप में अदा की जाने वाली कुल धनराशि भी तेजी से बढ़ती है।

अवरोही कर की दरें (Regressive Tax Rates)

आय स्तर	कर की दर	कर की राशि
10,000 रू.	10 प्रतिशत	1,000 रू.
20,000 रू.	7 प्रतिशत	1,400 रू.
30,000 रू.	5 प्रतिशत	7,500 रू.
40,000 रू.	4 प्रतिशत	1,600 रू.

स्पष्ट है कि अवरोही करों के अंतर्गत, आय बढ़ने पर कर की दर घटती जाती है जबकि आय के बढ़ने पर करों के रूप में अदा की जाने वाली कुल धनराशि में अवश्य वृद्वि होती है।

कराधान के प्रभाव (Effects of Taxation)

आजकल कराधान का उपयोग केवल राजस्व प्राप्ति के स्त्रोत के रूप में ही नहीं किया जाता बल्कि कुछ ऐसे सामाजिक एवं आर्थिक लक्ष्यों की प्राप्ति के एक महत्त्वपूर्ण साधन के रूप में भी किया जाता है जैसे कि उपभोग एवं उत्पादन का नियमन, तेजी एवं मंदी की स्थितियों पर नियंत्रण, आर्थिक प्रगति को प्रोत्साहन तथा आय की असमानताओं की समाप्ति आदि।

VPM CLASSES

अब हम कराधान के प्रभावों का निम्न शीर्षकों के अंतर्गत विवेचन करेगें।

1. **बचत तथा निवेश पर प्रभाव (Effects on Saving and Investment) :** करों की अत्यधिक ऊंची दरें बचतों पर प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं क्योंकि बचत आय पर निर्भर करती है और जब कराधान द्वारा आय कम हो जाती है तो बचत अपने आप ही कम होने लगती है। चूंकि निवेश बचत पर निर्भर करता है इसलिए जब कराधान से बचतें कम हो जाती हैं तो इसका प्रतिकूल प्रभाव निवेश पर भी पड़ता है।

2. **उत्पादन के गठन तथा स्वरूप पर कराधान के प्रभाव (Effects of Taxation on Composition and Production) :** उत्पादन का गठन तथा प्रतिरूप इस बात पर निर्भर होता है कि विभिन्न उद्योगों के बीच तथा विभिन्न क्षेत्रों के बीच साधनों का बंटवारा किस प्रकार का होता है। विभिन्न उद्योगों तथा क्षेत्रों के बीच साधनों का अंतरण या दिशा परिवर्तन (diversion) करने के लिए कराधान को राजकोषीय नीति (fiscal policy) के एक अस्त्र के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है।

   जब कुछ उद्योगों की उत्पादित वस्तुओं पर कर लगाया जाता है तो उससे उनकी कीमतें बढ़ जाती हैं। कीमतें बढ़ने से उन वस्तुओं की मांग कम हो जाती है तथा इसके फलस्वरूप लाभ भी घट जाता हैं।

3. **वितरण पर कराधान के प्रभाव (Effects of Taxation on Distribution):** जर्मन अर्थशास्त्री वैगनर (Wagner) को ऐसे सर्वप्रथम अर्थशास्त्रियों में गिना जाता है जिन्होंने इस बात पर जोर दिया कि कराधान का उपयोग आय की असमानताओं को कम करने के एक अस्त्र के रूप में किया जाना चाहिए। अत्यधिक आरोही कर प्रणाली आय तथा धन के वितरण में पाई जाने वाली असमानताओं को काफी कम करती है।

4. **कराधान तथा मुद्रा स्फीति (Taxation and Inflation):** मुद्रा स्फीति के दिनों में कराधान का उद्देश्य लोगों की क्रय शक्ति (Purchasing Power) को कम करना होता है। नए कर लगाने तथा प्रचलित करों की दरों में वृद्धि करने से उपभोग पर अंकुश लगती है, जिससे प्रभावी मांग (effective demand) का स्तर गिरता है और इससे कीमतों में स्थिरता लाने में मदद मिलती है। यही नहीं मुद्रास्फीति के दिनों में भारी कर लगाने से तथा प्रचलित करों की दरों में वृद्धि करने से क्रय शक्ति लोगों के हाथों में से सरकार की ओर स्थानान्तरित हो जाती है जिसका यदि समुचित रूप से उत्पादन कार्यों के लिए उपयोग किया जाए तो इससे आर्थिक क्रियाओं व रोजगार का स्तर ऊंचा उठता है और वस्तुओं तथा सेवाओं की पूर्ति में वांछित वृद्धि होने से बढ़ती हुई कीमतें रूकने लगती हैं। मुद्रास्फीति के दिनों में कुछ

कर संबंधी छूटें तथा कर रियायतें देना भी इसलिए जरूरी हो जाता है ताकि बचतों तथा निवेशों की दर में वृद्धि करके उत्पादन को बढ़ाया जा सके।

सहसम्बन्ध

सह–सम्बन्ध की परिभाषा (Definition of Correlation)

परिभाषा

प्रो. बोडिंगटन के अनुसार ''जब कभी दो या अधिक समूहों वर्गों अथवा समंक–श्रेणियों में सुनिश्चित संयोग विद्यमान हो तो उनमें सहसम्बन्ध का होना कहा जाता है। डेवनपोर्ट ने अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखा है कि ''सहसम्बन्ध का सम्पूर्ण विषय पृथक् विशेषताओं के मध्य पाये जाने वाले उस पारस्परिक सम्बन्ध की ओर संकेत करता है जिसके अनुसार वे कुछ सीमा तक साथ–साथ परिवर्तित होने की प्रवृत्ति रखते हैं।''

सहसम्बन्ध के प्रकार

सह–सम्बन्ध को सम्बन्धित चरों के मध्य परिवर्तन की दिशा, अनुपात तथा समंक, श्रेणियो की संख्या के आधार पर निम्न प्रकार व्यक्त किया जा सकता है:–

1. **धनात्मक तथा ऋणात्मक सहसम्बन्ध (Positive and Negative Correlation)** – जब दो चरों में परिवर्तन एक ही दिशा में हो अर्थात् एक चर में वृद्धि होने पर दूसरे चर में वृद्धि हो तथा एक चर में कमी होने पर दूसरे चर में भी कमी हो, तो ऐसे सहसम्बन्ध को धनात्मक सहसम्बन्ध (Positive Correlation) कहते हैं,

   धनात्मक सहसम्बन्ध के विपरीत जब दो चरों में परिवर्तन विपरीत दिशा में हों, अर्थात् एक चर में वृद्धि होने पर दूसरे में कमी हो अथवा एक चर में कमी होने पर दूसरे में वृद्धि हो, तो ऐसे सहसम्बन्ध को ऋणात्मक सहसम्बन्ध कहते हैं।

2. **रेखीय तथा अ–रेखीय वक्र–रेखीय सहसम्बन्ध (Linear and Non-Linear or Curvilinear Correlation)**– यदि दो चरों के मध्य परिवर्तन का अनुपात स्थिर रहता है तो ऐसा सहसम्बन्ध रेखीय कहलाता है। इसे यदि ग्राफ पेपर पर अंकित किया जाय तो एक सीधी रेखा बनेगी।

यदि दो चर मूल्यों में परिवर्तन का अनुपात स्थायी रूप से समान नहीं रहता, तब सहसम्बन्ध वक्ररेखीय या अ–रेखीय (Curvilinear or Non-linear) होगा । इसे यदि ग्राफ पेपर पर अंकित किया जाय तो एक वक्र रेखा बनेगी।

सहसम्बन्ध के परिणाम (Degree of Correlation)

सहसम्बन्ध का आंशिक परिणाम (Degree) सहसम्बन्ध गुणांक (Coefficient of Correlation) के माध्यम से ज्ञात किया जाता है। इसके आधार पर धनात्मक एवं ऋणात्मक सहसम्बन्ध के निम्न वर्णित परिणाम हो सकते हैं:

1. **पूर्ण सहसम्बन्ध (Perfect Correlation)** – यदि दो चर–मूल्यों के परिवर्तन समान अनुपात में हों तो उनमें पूर्ण सहसमबन्ध होता है। यदि समान अनुपात में परिवर्तन एक ही दिशा में होता है तब सहसम्बन्ध पूर्ण धनात्मक (Perfect Positive Correlation) होता है। इसके विपरीत यदि समान अनुपात में परिवर्तन विपरीत दिशाओं में हो तो सहसम्बन्ध पूर्ण ऋणात्मक (Perfect Negative Correlation) होता है।

2. **सहसम्बन्ध की अनुपस्थिति (Absence of Correlation)** – यदि दो चरों में आश्रितता बिल्कुल न पाई जाये अर्थात् उनके परिवर्तनों में कोई सहनुभूतिपूर्ण समबन्ध न हो तो एसी स्थिति को सहसम्बन्ध का अभाव कहते हैं।

3. **सहसम्बन्ध का सीमित परिणाम (Limited Degree of Correlation)** –जब दो चर–मूल्यों में न तो पूर्ण सहसम्बन्ध होता है न सहसम्बन्ध का अभाव ही होता है अर्थात् दोनों के बीच की स्थिति होती है, तब सहसम्बन्ध सीमित परिणाम में होता है। सीमित परिमाण में सहसम्बन्ध गुणांक शून्य (0) से अधिक किन्तु 1 से कम (>0 but < 1) होता है। यह धनात्मक या ऋणात्मक हो सकता है।

   > = Greater than; < = Less than

सीमित सहसम्बन्ध प्रमुखतः निम्नलिखित तीन प्रकार का हो सकता है:–

(क) उच्च स्तर का सहसम्बन्ध (High Degree of Correlation) - जब दो चर–मूल्यों में सहसम्बन्ध पूर्ण (Perfect) तो न हो, पर काफी अधिक मात्रा में हो तो वहाँ उच्च–स्तर का सहसम्बन्ध होता है। उच्च–स्तरीय सहसम्बन्ध की स्थिति में सहसम्बन्ध गुणांक 0.75 या इससे अधिक लेकिन 1 से कम होता है।

(ख) मध्य स्तर का सहसम्बन्ध (Moderate Degree of Correlation) - ऐसी स्थिति में सहसम्बन्ध गुणांक 0.25 से 0.75 के मध्य होता है। यह धनात्मक तथा ऋणात्मक हो सकता है।

(ग) निम्न–स्तर का सहसम्बन्ध (Low Degree of Correlation) - जब दो चर–मूल्यों में सहसम्बन्ध तो हो लेकिन बहुत ही कम मात्रा में हो तो वहाँ निम्न–स्तर का सहसम्बन्ध होता है। ऐसी स्थिति में सहसम्बन्ध गुणांक शून्य (0) व 0.25 के मध्य होता है। यह भी धनात्मक तथा ऋणात्मक हो सकता है।

सहसम्बन्ध ज्ञात करने की रीतियाँ (Method of Determining Correlation)

सहसम्बन्ध ज्ञात करने की प्रमुख रीतियों को अग्रांकित चार्ट द्वारा सरलता से समझा जा सकता है:–

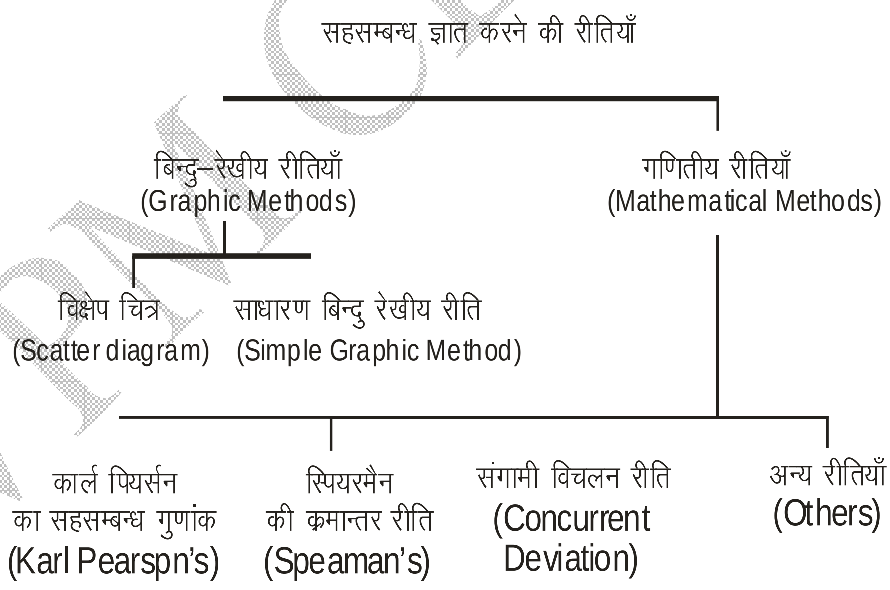

कार्ल पियर्सन के सहसम्बन्ध गुणांक का परिकलन (Calculation of Coefficient of Correlation by Karl Pearson's Method)

प्रत्यक्ष रीति (Direct Method) – प्रत्यक्ष रीति से सहसम्बन्ध गुंणाक ज्ञात करने की निम्न प्रकिया है :

1. दोनों श्रेणियों का समान्तर माध्य ($\bar{X}$ तथा $\bar{Y}$) ज्ञात कर लेते हैं।
2. दोनों श्रेणियों के तत्सम्बन्धी समान्तर माध्य से विभिन्न के विचलन dx तथा dy निकाल लेते हैं। यहाँ $dx = (X - \bar{X})$ तथा $dy = (Y - \bar{Y})$ हैं।
3. दोनों समंक श्रेणियों के परस्पर सम्बन्धित विचलनों (Corresponding Deviations) को गुणा करके उन गुणाओं के योग ($\Sigma dx\, dy$) ज्ञात कर लेते हैं।
4. दोनों श्रेणियों के विचलनों के वर्ग (Square) पृथक्–पृथक् ज्ञात कर उनके प्रमाप विचलन निम्न सूत्रों द्वारा ज्ञात कर लेते हैं :

   $\sigma_x = \sqrt{\frac{\Sigma d^2x}{N}}$, $\sigma_y = \sqrt{\frac{\Sigma d^2y}{N}}$

5. अन्त में सहसम्बध गुणांक ज्ञात करने हेतु निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता हैं :–

$$r = \frac{\Sigma dx, dy}{N.\sigma_x \sigma_y}$$ (प्रथम सूत्र)

यहाँ r = कार्ल पियर्सन का सहसम्बन्ध गुणांक (Coefficient of Correlation) $\Sigma dxdy$ = X तथा Y श्रेणियों के वास्तविक समान्तर माध्यों (Means) से तत्सम्बन्धी (Corresponding) विचलनों के गुणनफल का योग;

σ_x व σ_y = X तथा Y श्रेणियों के प्रमाप विचलन (S.D.); N = पद–युग्मों की संख्या (Mumber of pairs of Items)

$$r = \frac{\Sigma dx.dy}{N\sqrt{\frac{\Sigma d^2x}{N} \times \sqrt{\frac{\Sigma d^2y}{N}}}}$$ (द्वितीय सूत्र) or $r = \frac{\Sigma dx.dy}{N\sqrt{\frac{\Sigma d^2{}_x \times \Sigma d^2{}_y}{N \times N}}}$ or $r = \frac{\Sigma dx.dy}{\frac{N}{N}\sqrt{\Sigma d^2{}_x \times \Sigma d^2{}_y}}$ or

$$\frac{\Sigma dx.dy}{\sqrt{\Sigma d^2{}_x \times \Sigma d^2{}_y}}$$ (तृतीय सूत्र)

उपर्युक्त सभी सूत्रों में तृतीय सूत्र सबसे सरल है, अतः व्यवहार में इसी सूत्र का प्रयोग करना चाहिए।

लघु रीति (Short-cut Method) – लघु रीति से सहसम्बन्ध गुणांक ज्ञात करने की प्रक्रिया निम्न प्रकार है–

1. X तथा Y श्रेणियों में से सबसे सुविधाजनक एवं उपयुक्त मूल्य को कल्पित माध्य Ax मान लिया जाता है। ऐसे मूल्यों को कल्पित माध्य मानना सुविधाजनक रहता है जिससे विचलनों का योग कम से कम आये। कभी – कभी समंक श्रेणी में एक मूल्य कई बार आता है, ऐसी स्थिति में उस मूल्य को कल्पित माध्य मानना सुविधाजनक रहता है।
2. दोनों श्रेणियों के कल्पित माध्यों से मूल्यों के विचलन अर्थात् dx एवं dy ज्ञात कर लिये जाते हैं। यहाँ dx से तात्पर्य X – Ax तथा dy से तात्पर्य Y – Ay से है।
3. उपर्युक्त विचलनों के योग अर्थात् Σdx एवं Σdy ज्ञात कर लेते हैं।
4. विचलनों के आपस में गुणा करके उनका योग अर्थात् $\Sigma dxdy$ ज्ञात कर लिया जाता है।
5. विचलनों के वर्ग करके उनका योग अर्थात् Σd^2x तथा Σd^2y ज्ञात कर लिये जाते हैं।
6. अन्त में सहसम्बन्ध गुणांक ज्ञात करने के लिये निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है। प्रथम सूत्र निम्न प्रकार है :

$$r = \frac{\Sigma dxdy - N(\overline{X} - Ax)(\overline{Y} - Ay)}{N\sigma_x\sigma_y}$$

सूत्र में प्रयुक्त,

$\overline{X}$ व $\overline{Y}$ = Actual means of X and Y series

A_z व A_y = Assumed means of X and Y serie

$\Sigma dxdy$ = sim of the products of deviations from assumed means (कल्पित माध्यों से विलचनों के गुणनफलों का योग)

σx व σy = Standard deviations of X and Y Series

N = Number of pairs of items (पदयुग्मों की संख्या)

सूत्र के विभिन्न प्रकार होंगे : –

द्वितीय सूत्र :

$$r = \frac{\Sigma dxdy - N \times \left(\frac{\Sigma dx}{N}\right)\left(\frac{\Sigma dy}{N}\right)}{\sqrt{\left[\frac{\Sigma d^2x}{N} - \left(\frac{\Sigma dx}{N}\right)^2\right]}\sqrt{\left[\frac{\Sigma d^2y}{N} - \left(\frac{\Sigma dy}{N}\right)^2\right]}}$$

चूँकि $\bar{X} = A_x = \frac{\Sigma dx}{N}$ तथा $\sigma_x = \sqrt{\frac{\Sigma d^2x}{N} - \left(\frac{\Sigma dx}{N}\right)^2}$

इस सूत्र को और भी सरल रूप में व्यक्त किया जा सकता है :

तृतीय सूत्र : $r = \frac{\Sigma dxdy - \frac{\Sigma dx.\Sigma dy}{N}}{\sqrt{\left[\Sigma d^2x - \frac{(\Sigma dx)^2}{N}\right]\left[\Sigma d^2y - \frac{(\Sigma dy)^2}{N}\right]}}$

चतुर्थ सूत्र : $r = \frac{N \times \Sigma dxdy - (\Sigma dx \times \Sigma dy)}{\sqrt{\left[N \times \Sigma d^2x - (\Sigma dx)^2\right]\left[N \times \Sigma d^2y - (\Sigma dy)^2\right]}}$

द्वितीय, तृतीय तथा चतुर्थ सूत्र में प्रयुक्त : Σdx, Σdy = Sum of deviations from assumed means of X and Y series.

अन्य संकेताक्षरों का वही अर्थ है जो प्रथम सूत्र में है।

गुणा परिघात सह सम्बध रीति (Product Moment Method of Correlation)

यह रीति शून्य (Zero) काल्पनिक माध्य पर आधारित है। जब शून्य से विचलन लिये जायेंगें तो विचलन X तथा Y के मूल्यों के समकक्ष की होंगे। इस रीति की गणना प्रकिया निम्न प्रकार है–

1. प्रत्येक श्रेणी के मूल्यों का योग ज्ञात करते हैं। (ΣX एवं ΣY)
2. प्रत्येक श्रेणी के पद मूल्यों के वर्ग ज्ञात कर उनका योग करते हैं। (ΣX^2 एवं ΣY^2)
3. दोनों श्रेणियों के पारस्परिक पद मूल्यों को गुणा करके (X), (Y) गुणनफलों का योग करते हैं। (ΣXY)
4. तत्पश्चात निम्न सूत्र को प्रयुक्त कर सह सम्बन्ध गुणांक ज्ञात करते हैं :

$$r = \frac{N.(\Sigma XY) - (\Sigma X)(\Sigma Y)}{\sqrt{\left[N.(\Sigma X^2) - (\Sigma X)^2\right] \times \left[N.(\Sigma Y^2) - (\Sigma Y)^2\right]}}$$

स्पियरमैन की कोटि – अन्तर रीति (Spearman's Rank Difference Method)

प्रोफेसर चार्ल्स स्पियरमैन ने व्यक्तिगत श्रेणी में सहसम्बन्ध ज्ञात करने की एक सरल रीति का प्रतिपादन किया। इस रीति को स्पियरमैन की कोटि अन्तर रीति (Spearman's Rank Differences Method) या क्रमान्तर रीति (Ranking Method) कहते हैं।

सहसम्बन्ध गुणांक ज्ञात करने की रीति

1. कोटि–क्रम प्रदान करना (Assigning Ranks)
2. कोटि अन्तर या क्रमान्तर ज्ञात करना (Calculating Rank Differences)
3. क्रमान्तरों (D) का बीजगणितीय जोड़ सदैव शून्य ($\Sigma D = 0$) होता है।

क्रमान्तरों वर्ग ज्ञात करना (Calculating Squares of Rank Differences) – क्रमान्तरों (D) के वर्ग ज्ञात करके उन वर्गों का जोड़ (ΣD^2) ज्ञात किया जाता है।

सूत्र (Formula) – अन्त में निम्न सूत्र के माध्यम से कोटि–सहसम्बन्ध ज्ञात किया जाता है :

$$r_{(R)} = 1 - \frac{6\Sigma D^2}{N(N^2-1)}$$

सूत्र में प्रयुक्त–

r(R) = कोटि–अन्तर सहसम्बन्ध गुणांक (Rank Correlation Doefficient)

ΣD^2 = क्रमान्तरों के वर्गों का योग (Total of squares of rank differences)

N = पद–युग्मों की संख्या (Number of pairs of items)

समान्तर क्रम के लिए संशोधन (Correction for tied ranks) – समंक श्रेणी में जब दो या दो से अधिक पद मूल्यों का आकार समान हो तो उन्हें समान क्रम प्रदान किये जाते हैं। ऐसी स्थिति में कोटि– अन्तर सहसम्बध निकालने के सूत्र में संशोधन करना पड़ता है। संशोधित सूत्र निम्न प्रकार है:

$$r_{(R)} = 1 - \frac{6\Sigma D^2 + \frac{1}{12}(m^3 - m)}{N(N^2-1)}$$

सूत्र में प्रयुक्त m = उन पद मूल्यों की संख्या जिनके क्रम समान हैं।

(Number of items whose ranks are equal)

यहाँ यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि उपरोक्त संशोधित सूत्र में $+\frac{1}{12}(m^3 - m)$ का संशोधन उतनी बार करना होगा जितनी बार दोनों श्रेणियों में समान कम आये हैं।

संगामी विचलन रीति (Concurrent Deviation Method)

बिन्दु रेखीय रीति से यदि सम्बद्व संमक श्रेणियों के वक्र एक ही दिशा में साथ–साथ गमन करते हैं या संगामी हैं तो उनमें धनात्मक सहसम्बन्ध होता हैं। यदि वक्र विपरीत दिशा में गमन करते हैं अर्थात् प्रतिगामी हैं तो उनमें ऋणात्मक सहसम्बन्ध पाया जाता है। इसी प्रकार संगामी विचलन रीति के अनुसार भी यदि समंक श्रेणियों के अधिकार विचलन संगामी (Concurrent) होते हैं तो उनमें धनात्मक सहसम्बन्ध होता है तथा यदि ये विचलन प्रतिगामी (Divergent) होते हैं तो उनमें ऋणात्मक सहसम्बह होता है।

गणन क्रिया:

1. प्रत्येक श्रेणी में अगले पद मूल्य की उससे बिल्कुल पूर्व (Previous) के पद मूल्य से तुलना की जाती है। यदि मूल्य पिछले मूल्य से अधिक हैं तो उसका विचलन (+) होगा, यदि मूल्य गत मूल्य से कम है तो उसका विचलन (–) तथा यदि बराबर है तो विचलन (=) होगा यह ध्यान रख जाना चाहिए कि इस रीति में विचलन का केवल चिन्ह ही लिखा जाता है, विचलन की मात्रा नहीं। **विचलन युग्मों की संख्या श्रेणी में दिये गये पद–युग्मों की संख्या से एक कम होती है।**
2. X तथा Y श्रेणियों के विचलन चिन्हों के आधार पर संगामी प्रवृति ज्ञात की जाती है। जिन पद–युग्मों में एक साथ वृद्धि, कमी या बराबरी रही है, उनके सामने (+) का चिन्ह लगाते है। ऐसे मदों के योग की संकेताक्षर 'c' द्वारा व्यक्त किया जाता है।
3. फिर निम्नसूत्र का प्रयोग किया जाता है:

$$r_c = \pm\sqrt{\frac{2c - N}{N}}$$

सूत्र में प्रयुक्त संकेताक्षर से आशय, r_c = coefficient of concurrent deviation,

c = Number of concurrent deviations, N = Number of pairs of observation

खेल सिद्धांत

रैखिक प्रोगामिंग के विवेचन में असमानताओं (inequalities) के समावेश से अधिकतमकरण अथवा न्यूनतमकरण की दशाएँ शामिल होती हैं, लेकिन एक साथ दोनों का मिश्रण शामिल नहीं किया जा सकता। खेल–सिद्धांत में अधिकतमकरण व न्यूनतमकरण की प्रक्रियाएँ साथ–साथ चल सकती हैं, और इसका ढाँचा भिन्न किस्म का होता है।

खेल–सिद्धांत की आधारभूत अवधारणाएँ (Basic Concepts of Game Theory)

खेल में दो या अधिक भाग लेने वाले दल लेते हैं। खिलाडियों के लक्ष्यों में परस्पर विरोध की स्थिति पायी जाती है, इसलिए एक साथ सभी के लक्ष्यों को प्राप्त करना कठिन होता है। कुछ खिलाड़ी जीतते हैं जिससे उनको धनात्मक पे–ऑफ का भुगतान* (positive pay–off) मिलता है अर्थात् उनकी प्राप्तियाँ (+) से सूचित की जाती हैं। अन्य को हानि उठानी पडती है जिसको ऋणात्मक पे–ऑफ या प्राप्तियाँ (+) से सूचित की जाती है। अन्य को हानि उठानी पड़ती है जिसको ऋणात्मक पे–ऑफ या भुगतान (negative pay–off) से सूचित किया जाता है। इसके लिए (–) का निशान प्रयुक्त किया जाता है।

खेल दो प्रकार के होते हैं : (1) अवसर–खेल (games of chance), (2) रणनीति या व्यूहरचना पर आधारित खेल (games of strategy) अवसर–खेल के लिए ताश के खेल का उदाहरण ले सकते हैं जिसमें उत्तम ताश के पत्तों वाला खिलाड़ी जीतता है। उसमें उसकी दक्षता काम नहीं करती। रणनीति वाले खेल में प्रत्येक खिलाड़ी अपनी दक्षता व चतुराई का उपयोग करके अपना लाभ अधिकतमकरण करने का प्रयास करता है।

दो–व्यक्ति स्थिर–योग खेल (Two persons constant games)

खेल में दो–व्यक्ति, तीन व्यक्ति, या n–व्यक्ति हो सकते है। ''व्यक्ति'' (person) का अर्थ भाग लेने वाली पार्टी (participating party) से लिया जाता है जैसे मालिकों का संगठन एक तरफ व मजदूरों की यूनियन दूसरी तरफ। जब दो दल या दो व्यक्तियों का खेल होता है तो उसे दो–व्यक्ति खेल (Two-person game) कहा जाता है। स्मरण रहे कि व्यक्ति का अर्थ व्यक्ति या व्यक्ति–समूह से लिया जा सकता है।

भुगतान या 'पे–ऑफ' के आधार पर खेल को स्थिर–योग (Constant–sum) अथवा गैर–स्थिर योग या अस्थिर योग (nonconstant-sum) में विभाजित किया जा सकता है। स्थिर–योग खेल में खेल के अंत में परिणाम एक स्थिर राशि होता है, चाहे विभिन्न खिलाड़ी कुछ भी रणनीति अपनाएँ। मान लीजिए,

किसी जगह दो पेट्रोल पम्प है और उनकी कुल बिक्री 1000 इकाइयों के बराबर होनी है, चाहे परस्पर बिक्री का अंश बदल जाय। यह स्थिर–योग खेल का दृष्टांत माना जा सकता है, हालांकि इसमें बिक्री में दोनो के परस्पर अंश बदल सकते हैं।

शून्य–योग खेल (Zero-games)

शून्य–योग खेल स्थिर–योग खेल की एक विशेष स्थिति को कहते हैं जहाँ खेल का परिणाम शून्य के बराबर होता है। यदि शून्य–योग खेल में दो खिलाड़ी हों तो एक खिलाड़ी का पे–ऑफ धनात्मक (positive) होने पर दूसरे खिलाड़ी का पे–ऑफ ऋणात्मक (negative) होगा, ताकि खेल के परिणाम का योग शून्य हो। अतः एक खिलाड़ी जितना जीतता है, दूसरा उतना ही हारता है।

द्वयाधिकार (duopoly) में दो फर्मे होती है। एक फर्म दूसरी फर्म के ग्राहक 'तोड़ने' का प्रयास करती है। मान लीजिए फर्म A, फर्म B के 50 ग्राहक तोड़ लेती है तो A का पे–ऑफ +50 होगा और साथ में B का –50 होगा तथा कुल योग शून्य होगा।

आयताकार खेलों में सैडल–बिंदु हल (Saddle–point solution)

दो व्यक्ति शून्य–योग खेलों में 'सैडल बिन्दु' का बड़ा महत्व होता है। यदि प्रत्येक खिलाड़ी एक शुद्ध रणनीति (pure strategy) प्रयोग में लाता है और खेल में सैडल बिंदु होता है तो उसे खेल का हल (solution of the game) कहा जाता है। जब पंक्तियों के न्यूनतम मूल्यों की अधिकतम राशि (maximin) कॉलमों के अधिकतम मूल्यों की न्यूनतम राशि (minimax) के बराबर होती है तो वह बिंदु सैडल बिंदु माना जाता है। इसे निम्न उदाहरणों की सहायता से समझा जा सकता है :

उदाहरण 1. नीचे खिलाड़ी 1 का पे–ऑफ मैट्रिक्स दिया हुआ है

खिलाड़ी 1 का पे–ऑफ मैट्रिक्स

प्रथम खिलाड़ी की रणनीति	दूसरे खिलाड़ी की रणनीति रणनीति (1)		पंक्ति का न्यूनतम	
रणनीति 1	(11) 8	15 13	11 8 ←	मैक्सिमिन

VPM CLASSES

Phone: 0744-2429714 Mobile: 9001297111, 9829567114, 9001297243
Website: www.vpmclasses.com E-Mail: vpmclasses@yahoo.com / info@vpmclasses.com
Address: 1-C-8, Sheela Chowdhary Road, SFS, TALWANDI, KOTA, RAJASTHAN, 324005

रणनीति 2				(maximin)
कॉलम का अधिकतम	11	15		

↑
मिनीमैक्स (minimax)

प्रस्तुत उदाहरण में सैडल पाइंट 11 है, क्योंकि यह पंक्तियों के न्यूनतम मूल्यों में अधिकतम है, एवं साथ में कॉलमों के अधिकतम मूल्यों में न्यूनतम है। इस प्रकार पंक्तियों का 'मैक्सिमिन' कॉलमों के 'मिनीमैक्स' के समान होने से यह 'सैडल बिंदु' है। यहाँ खिलाड़ी 1 प्रथम शुद्ध रणनीति (pure strategy) काम में लेगा और खिलाड़ी 2 भी अपनी प्रथम शुद्ध रणनीति ही प्रयुक्त करेगा। इसलिए 11 पर संतुलन प्राप्त होता है और यही खेल का हल है। 11 ही इस खेल का सर्वोत्तम परिणाम है।

मिश्रित रणनीतियाँ : शून्य–योग–खेल (Mixed Strategies : A Zero-sum game)

मान लीजिए पिछली तालिका परिवर्तित रूप में इस प्रकार होती :

यूनियन की पे–ऑफ

	कम्पनी की रणनीतियाँ					
यूनियन की रणनीतियाँ	C_1	C_2	C_3	C_4	पंक्ति का न्यूनतम (मिनिमम)	
U_1	25	120	17	40	17	← मैक्सिमिन
U_2	30	19	13	15	13	
U_3	45	7	24	10	7	
U_4	0	9	16	5	0	
कॉलम का	45	20	24	40		

अधिकतम (मैक्सिमम)						

↑

यहाँ मिनीमैक्स का मूल्य 20 है जो मैक्सिमिन के मूल्य 17 से भिन्न है। अतः यहाँ सैडल बिन्दु नहीं होने से मिश्रित रणनीतियों का मार्ग अपनाया जायगा। हम मिश्रित रणनीति का पता लगाने के लिए इस प्रकार बढ़ सकते हैं।

पहले उन रणनीतियों को छोड़ते जाते हैं जिन पर दूसरी रणनीतियाँ छायी हुई हैं, जैसे यूनियन की U_1 रणनीति इसकी U_4 रणनीति पर छायी हुई है, क्योंकि U_1 पंक्ति में प्रत्येक राशि U_4 की प्रत्येक राशि से अधिक होने से हम U_4 रणनीति को छोड़ सकते है (U_4 may be dropped)। इसके पश्चात् पुनः देखने पर, कम्पनी के लिए C_1 की रणनीति पर C_2 या C_3 छायी हुई हैं, क्योंकि कम्पनी को C_2 या C_3 रणनीति के अंतर्गत C_1 तुलना में अपेक्षाकृत कम मजदूरी–वृद्धि देनी होती है। इसलिए C_1 को भी छोड़ सकते हैं। उसके बाद पुनः देखने पर यूनियन के लिए U_1 रणनीति U_2 पर छायी हुई है क्योंकि यूनियन को U_1 में प्रत्येक कोष्ठक में U_2 से ज्यादा राशि मिलती है। इसलिए U_2 भी छोड़ देते हैं। यूनियन को U_1 में प्रत्येक कोष्ठक में U_2 से ज्यादा राशि मिलती है। इसलिए U_2 भी छोड़ देते हैं।

अब स्थिति इस प्रकार बनती है।

	C_2	C_3	C_4
U_1	20	17	40
U_3	7	24	10

यहाँ कम्पनी के लिए C_2 रणनीति C_4 रणनीति C_4 पर छायी हुई हैं, (प्रत्येक कोष्ठक में C_2 की राशि C_4 से कम)

इसलिए हम C_4 को भी हटा देते है, जिससे अंत में स्थिति इस प्रकार रह जाती है :

यूनियन का पे–ऑफ

यूनियन की रणनीतियाँ	कम्पनी की रणनीतियाँ	
	C_2 (q)	C_4 (1 – q)

$U_1(p)$ $U_3(1-p)$	20 7	17 24

अब हमें मिश्रित रणनीति (mixed strategy) की मान्यता के आधार पर निर्णय करना है। इसके लिए बीजगणित की विधि या ग्राफ की विधि का प्रयोग करके आसानी से परिणाम निकाला जा सकता है।

मुख्य बिंदु

1. फिशर का विनिमय का समीकरण $M_v = PT$
2. केन्ज के अनुसार मुद्रा की सट्टा मांग ब्याज दर का घटता हुआ फलन है।
3. मूल्यानुसार कर वह कर है जो कि वस्तु के मूल्य के रूप में व्यक्त किया जाता है।
4. भारतीय कर–पद्धति आरोही है।
5. यदि प्रत्येक खिलाड़ी एक शुद्ध रणनीति प्रयोग में लाता और खेल में सैडल बिंदु है तो उसे खेल हल कहा जाता है।

VPM CLASSES